॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हे वेदवाणी ! तू कल्याण करने वाली है। तू वह वेदवाणी है जो सृष्टि में प्रारम्भ से सँसार के कल्याणार्थ आयी है। हे वाणी ! तेरा जो अनुकरण जो करते हैं उनका वास्तव में कल्याण होता है। तू वह वाणी है जो सूर्य और चन्द्रमा को प्राप्त हुई है। हे वाणी तू वह वाणी है जिसने यह सँसार रचाया है। तू बड़ी उदार व पवित्र है। सँसार में जो तेरा अनुकरण करते हैं वह बड़े ऊँचे और पवित्र बन जाते हैं वही उदार होते हैं।

हे परमात्मन् ! मैं यह नहीं जान पा रहा हूँ कि मैं उदार कैसे बन सकता हूँ? मेरी उदारता कहाँ है? आज मैं उदारता को पुकारता चला जा रहा हूँ। हे परमदेव ! वह उदारता कौन से पदार्थ में है। वह उदारता तेरे गुणगान में है, या अपने मानव-जीवन को बनाने में है। उदारता आयेगी या ऋषि-मुनियों के सत्संग से प्राप्त होगी? हे प्रभु ! तू उदार बनाने वाला है यह मुझे निश्चय हो चुका है। प्रभु ! आप उदारों के उदार हैं। यह सँसार आपने रचा है। नित्यप्रति इसको चला रहे हैं। मानव आपको स्वीकार करे या न करे, परन्तु आप अपने कर्त्तव्य को नहीं त्यागते। आपकी उदारता का आज सँसार में कोई प्रमाण नहीं। आज हम तेरे रचाये हुए पदार्थ को अशुद्ध बनाते रहते हैं। परन्तु प्रभु ! तुम इतने उदार और पवित्र हो कि प्रातःकाल में उसी पदार्थ को शुद्ध और पवित्र दे देते हैं। प्रातःकाल में मानव को जीवन देते हैं। रात्रि में निद्रा अवस्था में उसे आनन्द देते हैं। उस प्रभु को कोई माने या न माने परन्तु वह प्रभु अपनी उदारता में सूक्ष्मता नहीं करता। उसकी उदारता इतनी पवित्र है कि कोई नास्तिक हो आस्तिक हो परमात्मा की सृष्टि पर विचार करता हो न करता हो, परन्तु वह अपनी उदारता में सूक्ष्मता नहीं करता।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 502 समग्र अंक : 577
वर्ष : 42 समग्र वर्ष : 49

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	1
2.	अनुक्रम		2
3.	यमाचार्य नचिकेता संवाद	पूज्यपाद-गुरुदेव	3-18
4.	त्रेतकेतु ऋषि का याग	पूज्यपाद-गुरुदेव	19-23
5.	जीवन को प्रकाश में ले जाएँ	पूज्यपाद-गुरुदेव	24
6.	प्रसन्नता का मार्ग	पूज्यपाद-गुरुदेव	25-27
7.	स्वर्ग की विवेचना	पूज्यपाद-गुरुदेव	28-30
8.	Spiritual Lights	Pujyapad Gurudev	31-35
9.	पुस्तकों की सूची		36

श्रावणी पर्व

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा और पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की पावमानी प्रेरणा से रक्षाबन्धन के शुभावसर पर दिनाँक 10-8-2014 दिन रविवार को प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी लाक्षागृह, बरनावा में सामवेद ब्रह्म-पारायण महायज्ञ का आयोजन श्री गाँधी धाम समिति द्वारा किया जा रहा है। आप सभी इस यज्ञ में अपने परिवार, सगे-सम्बन्धियों एवम् मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

श्री गाँधी धाम समिति (पञ्जी.)

॥ ओ३म् ॥

यमाचार्य-नचिकेता संवाद

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भांति कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारें यहां परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेद-वाणी में उस महामना परमपिता-परमात्मा की महिमा का गुण-गान गाया जाता है क्योंकि वह परमपिता-परमात्मा वेदज्ञ है वेदाम् प्रकाशाम भूतम ब्रह्मणां व्रतम देवा। वेद का आचार्य यह कहता हैं कि वेदाम् प्रकाशाम भूतम ब्रह्मा जो मानों देखो पंच-महाभूतों को जो प्रकाश देने वाला है वह मानो ईश्वर वेदज्ञ कहलाता है। अमृतम प्रकाशाम अन्तःकरण सुतम ब्रह्मा वेद का आचार्य कहता है कि यह वेद मानव के अन्तःकरण का प्रकाशक है क्योंकि हमारे यहां **वेद नाम प्रकाश को माना गया है।** हम आचार्यों से यह कहा करते थे क्या हे पूज्यपाद! प्रकाश तो आप सूर्य को कहते हैं। तो उन्होंने कहा कि जैसे मानव के नेत्रों का प्रकाश यह सूर्य है इसी प्रकार हमारे अन्तःकरण का जो प्रकाशक है **अन्तः करण को जो प्रकाश में लाने वाला है वह वेद कहा जाता है।** तो इसलिए प्रत्येक मानव को अपने अन्तःकरण में पंच-प्रकार की अग्नियों का चयन कराना चाहिए। तो हमारे यहां जैसे नेत्रों का देवता यह सूर्य है इसी प्रकार अन्तःकरण का जो देवता है, प्रकाशक है वह हमारे यहां वेदाम प्रकाशाम भूतम ब्रह्मा वह वेद है जो पंच-महाभूतों को प्रकाश में लाने वाला है। तो विचार आता रहता है, वेद का मन्त्र कहता है हे मानव! तू अपनी मानवता को जानने का प्रयास कर क्योंकि वेद का मन्त्र हमें नाना प्रकार की आख्यायिकाएँ प्रगट कर रहा है और वेद का मन्त्र हमें कहता है हे मानव! तू आत्मा को जानने का प्रयास कर जो तेरे पंच-महाभूतो के लोक में विद्यमान रहता है।

आत्मा का लोक

एक समय बेटा! महर्षि साकल्य मुनि ने ऋषि महर्षि जालवी से यह कहा कि प्रभु आत्मा का लोक क्या है? तो उन्होंने एक वेद-मन्त्र को उद्गीत रूप में गाया और यह कहा वरणम ब्रव्हा प्रकाशाम भूतम ब्रह्मण लोकाम मानो उन्होंने कहा कि पंच-महाभूतों का जो लोक है, **आत्मा का यह जो लोक है यह पंच-महाभूत हैं।** पंच-महाभूतों का निर्माणवेत्ता वह चैतन्य-देव है और यह आत्मा उसमें वास करने वाला है। तो यह जो हमारा मानव शरीर है यह पंच-महाभूतों का लोक है। यह आत्मा का लोक क्योंकि लोक कहते हैं गृह को और जो उसमें वास करता है वह उसी का लोक कहा जाता है। तो विचार आता रहता है कि आत्माम भूतम लोकाम वर्णस्सुतम मानो देखो वह हमारा वरणीय देव है जो पंच-महाभूतों को प्रकाश में गतिवान बनाने वाला है। तो मेरे पुत्रो! देखो जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया तो वह मौन हो गये।

दो प्रकार का विज्ञान

इसलिए आज का हमारा वेद-मन्त्र कहता है हे मानव! तू वेद को जानने का प्रयास कर। वेद में नाना प्रकार की आख्यायिकाए आती हैं और उस ज्ञान को पान करने वाला ही अन्तःकरणीय प्रकाश वाला बन जाता है। हमारे यहां दो प्रकार के विज्ञान प्रायः परम्परागतों से रहे हैं। एक विज्ञान जो भौतिकवाद कहलाता है और दूसरा विज्ञान जो आध्यात्मिकवादी है। तो बेटा देखो! आध्यात्मिक-वेत्ता जब वह अपने पंच-महाभूतों से उपराम होता है परमात्मा के राष्ट्र में अपने को स्वीकार कर लेता है तो वह जानो कि वह आध्यात्मिकवादी परमपिता-परमात्मा के राष्ट्र में चला गया है और भौतिक विज्ञान मानो देखो उसे कहा जाता है जो अणु और परमाणु के ऊपर अन्वेषण करता रहता है और लोक-लोकान्तरों की यात्रा में प्रवेश करता रहता है। मुझे बेटा वह काल

स्मरण आता रहता है जब भारद्वाज मुनि के यहां नाना प्रकार की विज्ञानशाला और महर्षि सोमकेतु ऋषि महाराज अपने में अन्वेषण करते और ब्रह्मचारी सुकेता और कवन्धि दोनों उनके सहायक बन करके नाना प्रकार के यन्त्रो का निर्माण करते रहे हैं और यन्त्रो में विद्यमान हो करके नाना प्रकार के लोक लोकान्तरो की उड़ाने उड़ते रहे हैं। बेटा मुझे वह काल स्मरण है जब महर्षि भारद्वाज-मुनि के यहां कुम्भकरण अपनी अध्ययन क्रियाओं में लगे हुए थे और महाराजा कुम्भकरण वह नाना-यन्त्रों में विद्यमान हो करके लोक-लोकान्तरों की यात्रा करते रहे हैं।

आज बेटा! मैं तुम्हे विज्ञान के वागंमय ने नहीं ले जाना चाहता हूँ केवल विचार-विनिमय यह कि मानव आध्यात्मिक-वेत्ता बन करके अपनी आत्मा का चिन्तन करना चाहिए और आत्मा का चिन्तन जब तक नहीं होता जब तक भौतिक विज्ञान को नहीं जान लेते और **भौतिक विज्ञान मानो देखो उस आत्मा के लोक को कहा जाता है** क्योंकि परमपिता-परमात्मा का जो राष्ट्र है परमात्मा का जो ज्ञान और विज्ञान है उसमें आलस्य और प्रमाद नहीं होता है वह अन्धकार से रहित है। जहां आलस्य और प्रमाद नहीं है तो वहां सदैव प्रकाश रहता है और जहां प्रकाश रहता है वहां जीवन रहता है और जहां जीवन रहता है वहां परमात्मा के राष्ट्र को मानव निहारता रहता है। **अन्धकार में मृत्यु है और प्रकाश में जीवन है** तो हमें जीवन के ऊपर विचार-विनिमय करना चाहिए। तो बेटा हमारा वेद-मन्त्र नाना प्रकार की आख्यायिकाओं का वर्णन करता रहता है। आज मैं बेटा उस सन्दर्भ में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ।

स्वर्ग का मार्ग

विचार-विनिमय केवल हमारा यह आत्माम भूतम ब्रह्मा आत्मा के ऊपर हमारा चिन्तन होना चाहिए। आत्म-चिन्तन करने वाला इस संसार की नाना प्रकार की त्रुटियों से उपराम हो जाता है। तो आओ बेटा! देखो तुम्हें मैं उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ जहां मुनिवरो देखो उद्दालक-गोत्र के ब्रह्मचारी नचिकेता अपने आचार्य, यमराज के द्वारा नाना प्रकार के प्रश्न कर रहे हैं, अपनी जिज्ञासा प्रकट कर रहे हैं। हमारे यहां दो प्रकार का प्रसंग होता है-एक प्रसंग वह होता है जो अपने को मानो कुछ उद्देश्य लिए हुए होता है और एक वह होता है जो जिज्ञासा से युक्त होता है। तो बाल ब्रह्मचारी नचिकेता जो जिज्ञासु है और जिज्ञासु यथार्थता में प्रवेश करना चाहता है। मेरे प्यारे! उन्होंने आचार्य से कहा हे प्रभु मैं अमृताम ब्रह्में वरणं ब्रहे जैसे मेरे पिता की इच्छा पूर्ण आप ने की है उसी प्रकार मैं स्वर्ग में जाना चाहता हूँ। उन्होंने कहा बहुत प्रिय। उन्होंने कहा हे ब्रह्मचारी! **तुम गार्हपत्य नाम की अग्नि का पूजन करो** और गार्हपत्य नाम की अग्नि वह होती है जैसे आचार्य के समीप जब ब्रह्मचारी जाता है वह ब्रह्मचारी को अपने गर्भ में धारण करके कहता है। हे ब्रह्मचारी! आओ मैं तुझे मृत्यु से पार कराना चाहता हूँ। तो बेटा वह कहता है चक्षु में शुन्धामि, प्राणं में शुन्धामि, श्रोत्रं में शुन्धामि त्वचा में शुन्धामि। वह शुन्धामि कहता हुआ कहता है ब्रह्मचारी तुम इन्द्रियों से पार हो और तू प्रत्येक इन्द्रियों से देखो उपरामता को प्राप्त हो जिससे मृत्यु तेरे निकट न आये। मेरे प्यारे ब्रह्मचारी अपने में रत्त हो जाता है और वह एकन्त स्थली में जब अध्ययन करता है तो ब्रह्मचारी अध्ययन करता है अपनी इन्द्रियों को मृत्यु से पार ले जाता है। मेरे प्यारे देखो अग्नि का अग्नि में और तरलत्व मानो आपो में और गुरुत्व इन्द्रियों का जो प्रधान है वह गुरुत्व पृथ्वी में रत्त हो जाता है। मेरे प्यारे देखो इसी प्रकार जब ऋषि ने अमृतम ब्रह्मा जब ऋषि ने देखो यह वर्णन कराया कि तम गार्हपत्य नाम की अग्नि का अध्ययन करो और तुम ब्राह्मण बन जाओ। हे ब्रह्मचारी तुम ब्रह्मवेत्ता बन करके ब्रह्मवर्चोसी बन जाओ। उन्होंने कहा प्रभु! मैं ब्रह्मवर्चोसी कैसे बनूंगा मैं ब्रह्म को कैसे जानू? उन्होंने कहा ब्रह्म और चरी को ऊपर से अपने में धारण करो। **ब्रह्म कहते हैं परमात्मा को और चरी कहते हैं प्रकृति को,** दोनों को अपने में समावेश कर लो और जो यह तुम्हारा सूत्र देखो यह जो प्राणमयी सूत्र चल रहा है इस सूत्र को मनका बना करके और यह मानों देखो जैसे माला मनको से

बनती है और सूत्रो से बनती है। सूत्र और मनके दोनों का समन्वय होता है इसी प्रकार तुम मानो देखो इन दोनों इन मनको को सूत्र में पिरो दो ब्रह्म सूत्र में पिरोने से ही तुम्हारी माला बन जायेगी और वह माला देखो अपने में देखो धारयामि बन जाती है। तो विचारवेत्ता ने जब ऐसा वर्णन किया, ऋषि ने, तो बेटा देखो नचिकेता अपने में मौन हो गये।

द्वितीय अग्नि को उन्होंने कहा कि **गृहपत्य नाम की अग्नि का पूजन करो** और गृहपत्य नाम की अग्नि में मानो देखो मेरी माता और पितर दोनों जाते हैं। मुझे बेटा वह काल स्मरण आता रहता है ऋषि कहता है क्या जब मदालसा ने अपने में, अपने गर्भस्थल में आत्मा का प्रवेश हो गया तो माताएं बेटा उस विद्या को प्रायः जानती रही हैं जिस विद्या से मुनिवरो देखो गर्भ की आत्मा से वार्ता प्रगट करती हैं माँ। मेरे प्यारे! देखो गर्भ की आत्मा ब्रह्मणा देखो माता मदालसा साधना में परणित रही। जब बाल्यकाल में देखो योगीजन प्राणो को सूत्र में लाना जानते हैं और प्राण को एक दूसरे में मिलान करना जानते हैं उसे अन्तः शरीर में जो आत्मा विद्यमान है शिशु है उससे वह वार्ता प्रगट करती हैं। माता मदालसा ने जब आत्मा के गर्भ से वार्ता प्रारम्भ की तो उसने कहा हे बाल्य! शुद्ध, बुद्ध, निरंजन इस प्रकार का उद्गीत गाती हुई बोली हे आत्मा। तुमने प्राण को अपान में, अपान को व्यान में और व्यान को समान में और समान को मुनिवरो देखो उदान में प्रवेश करती मिलान करती वह आत्मा गर्भ की आत्मा से माता वार्ता प्रगट करने लगती है। यह कोई नवीन विद्या नहीं है कि हम अपने गर्भ की आत्मा से वार्ता न प्रगट कर सकें। प्रायः माताओं ने इस प्रकार की विद्या को जाना। ये विद्याऐं महर्षि दुर्वासा मुनि भी जानते थे। मानो देखो महर्षि दुर्वासा मुनि ने बहुत सी माताओं के गर्भम ब्रह्मं ब्रह्मे उन्होंने बेटा देवत्व को प्राप्त कराया। आज मैं दुर्वासा मुनि की चर्चा प्रगट नहीं कर रहा हूँ केवल यह कि एक-एक मन्त्र में जो-जो देवता जिस मन्त्र का वह देवता है उसी का व्यवधान करना यह माताओं का प्रायः कर्त्तव्य रहा

है। तो जब माता इस प्रकार के क्रियाकलापों में परणित रहती हैं तो पितरजन भी मानो इसी प्रकार की विद्या का अध्ययन करते हैं और अध्ययन करते हुए कहते हैं आओ याग करें। प्रत्येक गृह में माता-पिता का याग करना, दर्शनों का अध्ययन करना और परस्पर मानो दार्शनिक चर्चाए करना बेटा! उन वार्ताओं को उनके गृह में रहने वाले, वास करने वाले ब्रह्मचारी ब्रह्मचारिणीयां सर्वत्र मानो माता-पिता के पद चिन्हों पर गमन करने वाले और वह मानो जो **माता-पिता का जो क्रियाकलाप होता है उसी को बाल्य-बालिका ग्रहण करते हैं।** मानो इसी प्रकार वेद का ऋषि कहता है हे मानव! यदि तू अपने गृह को स्वर्ग बनाना चाहता है गृह-स्वामी और गृह-स्वामिनी तो मानो दोनों को परस्पर प्रीति और ज्ञान की मानो पुष्पांजलियों को उत्पन्न करना है जिससे तुम्हारा गृह प्रकाश में प्रकाशित हो जाए। मेरे पुत्रो देखो जब इस प्रकार ऋषि ने जब वर्णन किया उन्होंने कहा हे बालक नचिकेता यदि कोई गृह-स्वामी और गृह-स्वामिनी अपने को ऊंचा बना लेते हैं तो गृह में रहने वाले बाल्य-बालिका उनके पदचिन्हों पर अपनी क्रियाओं में रत्त हो जाते हैं, गृह स्वर्ग बन जाता है और वह **विचार रूपी जो अग्नि है जो गृहपत्य नाम की अग्नि कहलाती है** जिससे गृह उदबुध होते हैं और गृहों में प्रकाश आता है मेरे प्यारे देखो एक महानता की ज्योति जागरुक हो जाती है। तो विचार-विनिमय करने का अभिप्राय यह कि मुनिवरो यह गृहपत्य नाम की अग्नि है जो गृह मैं सदैव परणित रहती है। **विचारो का नाम अग्नि है।** माता-पिता जब वेद का अध्ययन करते हैं और वेद का अध्ययन करते हैं अंगो और उपांगों को जान करके उसके अनुसार क्रियाकलाप करते हैं तो बाल्य-बालिका, गृह मानो देखो स्वर्ग बन जाता है। तो इस प्रकार उच्चारण करके ऋषि ने कहा हे ब्रह्मचारी! यह गृहपत्य नाम की अग्नि कहलाती है और गृहपत्य नाम की अग्नि को ऊंचा बनाना तुम्हारा कर्तव्य है।

तृतीय अग्नि का नाम मानो देखों **आवहनीय** नाम की अग्नि कहते हैं। आवहनीय कहते हैं जो विद्यालयों में पनपती रहती है। हमारे

यहाँ देखो भगवान-मनु से जब कालेत्वर ऋषि ने यह प्रश्न किया क्या महाराज देखो इस संसार को ऊंचा बनाने के लिए शिक्षा-प्रणाली कैसी होनी चाहिए? तो मुनिवरो भगवान्-मनु ने यह कहा हे ऋषिवर! मेरे विचार में तो यह आता है क्या शिक्षा-प्रणाली में जब विद्यालयों में शिक्षा देने वाले महान होने चाहिए। शिक्षा देने वाले मानो अपनी इन्द्रियों के क्रियाकलापों से उपराम होने चाहिए। जब वह वानप्रस्थ और देखो वानप्रस्थी दोनो ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणीयों को शिक्षा देते हैं तो वह संसार के क्रियाकलापों से उपराम हो जाते हैं। ब्रह्मचारी को देखो पुरुष वानप्रस्थ शिक्षा देने वाला हो और ब्रह्मचारिणीयो को मानो देखो जो गृह से उपराम हो गये हैं त्याग पूर्वक बेटा देखो वह विद्यालयो में ब्रह्मचारिणीयों को अपना उपदेश दें। जिससे उनकी किसी प्रकार की किसी भी इन्द्रिय की कामना न रहते हुए ऐसा जो वानप्रस्थी है वह मानों देखो दोनों वर्गों को ऊंचा बना देगा। बेटा देखो ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी उस विद्या को पान करके अपने में महानता का दर्शन करेगें। तो मेरे प्यारे! देखो उसी के लिए हमारे यहाँ भगवान् मनु ने एक नियम बनाया कि जो वानप्रस्थी है राष्ट्र का उस पर आधिपत्य होना चाहिए। राष्ट्र का ही मानो देखो वहां उस विद्वानों के द्वारा अध्ययन की प्रतिक्रिया होनी चाहिए उनका आहार और व्यवहार वह सब राष्ट्र पर उनका दायित्व होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो वह अमृतम ब्रह्मा वह नाना प्रकार की विद्या दे करके ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणीयों को ऊंचा बनाते हैं तो समाज ऊंचा बन जाता है।

संन्यासी

तो इस प्रकार मुनिवरो देखो यह तीन प्रकार की अग्नियां हैं-एक में ब्रह्मचारी तपता है द्वितीय में मानो देखो मातृ-पितृ तपते हैं और तृतीय में मुनिवरो देखो वानप्रस्थ तपता है और चतुर्थ जो अग्नि है उसमें बेटा! संन्यासी तपता रहता है। संन्यासी इसीलिए मानो देखो अग्नि वस्त्रों को धारण करता है जैसे अग्नि का स्वरूप होता है ऐसे ही मानो देखो ज्ञानी और विवेकी जो संन्यासी होते हैं उनका देखो वस्त्र भी ऐसा ही हो

और अन्तःकरण भी इसी प्रकार ज्ञान से तपा हुआ होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो विचार आता रहता है इस प्रकार देखो यह अग्नि में अपने प्रभु का ध्यानावस्थित होते हैं जिससे ज्ञानाम भूतम ब्रह्मा जैसे राजा जनक ने महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज से कहा था महाराज ये **अग्नेय वस्त्रों का अभिप्राय क्या है?** तो याज्ञवल्क्य मुनि ने कहा अग्नेय वस्त्रों का अभिप्राय वस्त्र अग्नेय हों या न हों परन्तु देखो अग्नेय वस्त्र भी हों और अन्तःकरण भी उसके अनुसार होना चाहिए तो वह मानो मानव देव पुरी को प्राप्त हो जाता है वह देवत्व को धारण कर लेता है।

मुनि व ऋषि

तो मेरे पुत्रो! देखो इस प्रकार ऋषि ने अपना मन्तव्य दिया और ऋषि यह उच्चारण करके मुनिवरो देखो वेदी तक चले गये। उन्होंने कहा कि **मुनि उसे कहते हैं जो अंगो और उपांगो से जानने वाले और विवेकी पुरुष मुनिवरो देखो जो बाल्य-प्रवृत्ति का बन जाता है उसको मुनि कहते हैं और ऋषि उसे कहते हैं जो मानो अपने ऋषित्व में रमण करने वाला, अपने में अनुसन्धानवेत्ता और अणु और परमाणुओं को अपने में धारण करके नाना लोक-लोकान्तरो की उड़ाने उड़ने वाला हो वह ऋषि कहलाता हैं क्या मुनि प्रवृत्ति को धारण करके अपने विवेक को अपने में लाने का प्रयास करेगा।**

नचिकेता की परीक्षा

मेरे पुत्रो! देखो ऋषि ने इस प्रकार अपनी विचारधारा व्यक्त की और वह ऋषि मौन होने लगे इतने में बेटा नचिकेता ने कहा हे प्रभु! आप ने मेरे अज्ञान को दूरी कर दिया है मैं स्वर्ग में चला जाऊंगा परन्तु वहां जाने से पूर्व मेरा एक प्रसंग और है। उन्होंने कहा क्या? क्या मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह आत्मा इस शरीर को त्याग करके कहां जाता है? हे प्रभु! यह मेरी जिज्ञासा बनी रहती है। मैं आचार्यों से प्रश्न भी करता रहता हूँ परन्तु मेरी जिज्ञासा देखो वह बलवती होती रहती है प्रभु! मेरे प्यारे! देखो नचिकेता ने जब ऐसा कहा तो यमाचार्य ने

विचारा कि यह ब्रह्मचारी प्रश्न तो किए जा रहा है परन्तु यह इस विद्या का अधिकारी भी है अथवा नहीं। उन्होंने कहा मैं व्रणे उन्होंने मुनिवरो देखो एक रथ स्वर्ण से सुशोभित मानो श्रृंगारित करते हुए और मुनिवरो देखो उस रथ को सब मानो देखो अश्व का जो श्रृंगार है वह भी स्वर्ण का है और उसमें विद्यमान होने वाली कुछ सुन्दरियां हैं और अंग-संग मानो देखो उसमें बंधा हुआ एक मानो देखो गौ इत्यादि दुग्ध देने वाले पशु है। उन्होंनें कहा हे ब्रह्मचारी! नचिकेता तुम पृथ्वी के राज को भोगो यह मैं तुम्हें पृथ्वी का राज दे रहा हूँ। तुम आत्मा के विषय में क्या प्रश्न करते हो मानो देखो आत्मा के प्रसंग में बड़े-बड़े महापुरुष चले गये हैं और देखो वह अन्त में नेति-नेति कह करके शान्त हो गये हैं। तो हे प्रभु, हे ब्रह्मचारी तू मानो देखो इन नाना सुन्दरियों को भोग और यह दुग्ध देने वाला पशु है इसका पालन कर और देखो यह पृथ्वी के राज को भोगो तुम अधिपति बनों, तुम मानो प्रजापति बनों और तुम पृथ्वी के राजा बन करके राज को भोगो। बालक नचिकेता मौन हो करके बोले हे प्रभु! आपका वाक् तो बड़ा विचित्र है परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ प्रभु! एक सुन्दरी से मेरा स्नेह हो गया है और वह सुन्दरी मेरे से पूर्व उसका निधन हो गया तो मुझे अपार कष्ट होगा। यह मुझे नहीं चाहिए। हे प्रभु! यदि दुग्ध देने वाला पशु है पशु से भी मुझे प्रीति बन गई है तो वह भी मेरे संस्कारो की उपलब्धि में सहायक बनेगा संस्कारों में जन्मों का प्रादुर्भाव होगा। तो हे प्रभु! देखो मैं दुग्ध देने वाले पशु को भी नहीं चाहता। हे भगवन्! यदि मैं पृथ्वी के राज को भोगू तो मानो देखो कहीं राष्ट्र में क्रान्तियां रही हैं कहीं राष्ट्र में मानव मानव का हनन कर रहा है। हे प्रभु! देखो कहीं राष्ट्र में नाना प्रकार की क्रान्तियां आ रही हैं स्वार्थवश हो करके, हे प्रभु! देखो वह मुझे मेरे संस्कारों को जन्म देता रहेगा और मैं मानो देखो उस राष्ट्र को नहीं चाहता जिसमें नाना प्रकार की मानो देखो हिंसा हो। मैं अहिंसा में परणित होना चाहता हूँ। हे प्रभु! मुझे यह अश्व नहीं चाहिए, स्वर्ण नहीं चाहिए क्योंकि महापुरुषो का जो स्वर्ण है वह मानो यह स्वर्ण नहीं है **महापुरुषों का यदि कोई स्वर्ण है, आभूषण है तो उसका ज्ञान**

है और ज्ञान में जब वह रत्त रह जाता है तो वह स्वर्ण बन जाता है।

उन्होंने एक आख्यायिका प्रगट की। उन्होंने कहा क्या एक महात्मा रहते थे गंगा तट पर मानो देखो जलाशय के तट पर रहते थे। वह नग्न थे। एक समय देखो अयोध्या का राजा भ्रमण करते हुए मुनिवरो देखो उस मार्ग में जा पहुंचा। दृष्टिपात किया एक महात्मा नग्न हैं और वह प्रभु का चिन्तन कर रहे हैं, मनन कर रहे हैं। राजा ने विचारा क्या मैंने तो यह प्रतिज्ञा की है कि मेरे राष्ट्र में कोई दीन नहीं रहना चाहिए धनवान धनम ब्रह्मे धन से दीन नहीं रहना चाहिए। यह साधु तो, यह पुरुष तो देखो नग्न रहता है और इसके द्वारा वस्त्र भी नहीं हैं। उन्होंने अपने मन्त्री-गणों से कहा जाओ कुछ मुद्रा दे करके आओ। महात्मा के द्वारा पहुँचे कि महाराज राजा ने यह मुद्रा दी हैं। ऋषि ने कहा जाओ किसी दीन को दे दो। राजा के समीप पहुँचे मन्त्री उन्होंने कहा प्रभु दीन के लिए कहा है। राजा ने विचारा कि यह मुद्रा सूक्ष्म हैं। उन्होंने और विशेष मुद्राएं दीं और मुद्राएं जब दी तो उनके द्वारा मन्त्रियों ने कहा लीजिए भगवन्। उन्होंने कहा जाओ किसी दीन को दे दो। मेरे प्यारे! देखो वह अमृतम राजा के समीप पहुँचे। राजा ने मुद्राओं को विशेष मुद्रा और दे करके महात्मा के समीप पहुँचे और महात्मा से कहा कि महाराज यह स्वीकार कीजिए। उन्होंने कहा राजन् मैंने कई समय कहा है तुम किसी दीन को दे दो। राजा ने कहा प्रभु मेरे राष्ट्र में आपसे दीन कोई नहीं जिसके द्वारा वस्त्र भी नहीं है। उन्होंने कहा कि मैं तो राजाओं का राजा हूँ। उन्होंने कहा क्या जब तुम राजा के राजा हो तो तुम्हारे द्वारा सेना कहाँ है राष्ट्र को, राष्ट्र की सेवा करने के लिए। उन्होंने कहा राजन् मेरा कोई शत्रु ही नहीं है इसलिए मुझे सेना की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने कहा तो तुम्हारे द्वारा द्रव्य कहाँ हैं राष्ट्र के क्रियाकलाप के लिए। उन्होंने कहा कि मेरे द्वारा एक रसायन ऐसी है, मैं मानो देखो रसायन से स्वर्ण बना लेता हूँ और राष्ट्र का पालन चलता है। बेटा! राजा ने विचारा उन्होंने कहा कि मेरा स्वर्ण

बना दीजिए। अमृतम बेटा! उस समय राजा मुझे कह करके मौन हो करके अपने राष्ट्र को चले गये। विश्राम गृह में पहुँचे तो उन्हें निद्रा नहीं आ पाई और यह अपने में विचारने लगा कि महात्मा से मैं उस रसायन को जानूँ जिससे स्वर्णपति बन जाऊँ मैं। तो बेटा! देखो राजा मध्य-रात्रि में वहाँ से गमन करते महात्मा के समीप पहुँचे। महात्मा ने कहा कौन? उन्होंने कहा कि मैं राजा हूँ। ऐसे इस समय कैसे? उन्होंने कहा प्रभु! मुझे जो आप मानो देखो वह प्रसमं ब्रहे वह मुझे देखो मेरा स्वर्ण बना दीजिए अपने यन्त्र से। उन्होंने कहा अरे राजा! बोलो कि दीन तुम हो या मैं हूँ? राजा ने कहा प्रभु दीन तो मैं ही हूँ परन्तु मेरा स्वर्ण बना दीजिए। अच्छा, तुम मेरे द्वारा आया करो, नित्यप्रति। मुनिवरों देखो वह राजा उनके यहाँ आने लगे। उन्होंने उन्हें आत्मा परमात्मा का ज्ञान दिया। क्या यह आत्मा यह है, परमात्मा यह है, प्रकृति यह है। जब बेटा उन्हें ब्रह्मज्ञान हो गया, महात्मा ने अपने योगाभ्यास से दृष्टिपात किया कि अब राजा दीन नहीं रहा है उन्होंने कहाँ राजन, जब वह पूर्ण ज्ञानी हो गया, विवेकी बन गया, क्या हे राजन! मैं तुम्हारा अब स्वर्ण बनाना चाहता हूँ। उन्होंने कहाँ हे ऋषिवर! जो मेरा आप स्वर्ण बनाना चाहते थे वह स्वर्ण मेरा बन चुका है, मुझे स्वर्ण की आवश्यकता नहीं है।

आत्मा शरीर को त्यागकर कहाँ जाता है?

तो मेरे प्यारे! विचार-विनिमय क्या कि **मानव का ज्ञान और विवेक जो है वह सब से महान द्रव्य है, यह स्वर्ण है, यह मानव की सम्पदा है इस सम्पदा को अपने में धारण करना चाहिए।** तो मेरे प्यारे देखो अमृतम ब्रह्मा वर्णस्सुतम बालक नचिकेता ने कहा प्रभु! आप मेरा स्वर्ण बना दीजिए। प्रभु! मैं मानो यह द्रव्य नहीं चाहता। हे प्रभु! मैं आपकी शरणागत हूँ। आप ने मृत्यु को विजय किया यम आपको कहते है आप मुझे मेरा स्वर्ण बना दीजिए। मैं न तो द्रव्य मानो देखो दुग्ध देने वाला पशु चाहता हूँ, मैं यह न स्वर्ण चाहता, न पृथ्वी का राज चाहता इसमें देखो राजा-महाराजा सब नारकिक हो करके चले

गये हैं। मेरे प्यारे! देखो ऋषि ने विचारा यह ब्रह्मचारी तो सुयोग्य है। उन्होंने कहा नचिकेता तुम्हें धन्य है क्या तुम दो आश्रमों को त्याग करके ब्रह्म-ज्ञान में प्रवेश कर रहे हो आओ तुम विराजो। वह एक पंक्ति में विद्यमान हो गये और उन्होंने कहा कि आत्माम भूतम ब्रह्मा लोकाम यह आत्मा जब शरीर को त्यागता है तो **इस आत्मा के तीन प्रकार के शरीर कहलाते हैं।** यह स्थूल शरीर है जिसमें चौबीस अव्ययों का निर्माण किया गया है। इसमें दस इन्द्रिया हैं और दस प्राण हैं मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार है। यह मानो देखो चौबीस खम्बों का यह मानवीय शरीर कहलाता है और जब यह शरीर का विच्छेद होता है तो आचार्य कहता है कि अन्तम ब्रह्मा क्रतम देवा जब यह शरीर को त्यागता है आत्मा तो मेरे प्यारे! यह सूक्ष्म शरीर को ले करके जाता है और अमृतम ब्रह्मा व्रते मानो अमृत को प्राप्त हो करके और जैसा **इसका अन्तिम शरीर को त्याग करके जैसा मन में विचार होता है, बुद्धि में तारतम्य होते है उसी के अनुसार मानव देखो अन्तरिक्ष में चला जाता है और यह तीन प्रकार की चार प्रकार की वायु में भ्रमण करता है।** एक इन्द्र नाम की वायु है, एक मृचि नाम की वायु है, एक स्वेधज नाम की वायु है और एक अग्नि वायु कहलाती है। मानों देखो उस अग्नि में इस आत्मा के संस्कारों का मन्थन होता है और मन्थन जब होता है तो जब यह पुनः किसी माता के शरीर में संस्कारों के आधार पर जन्म लेता है। तो यह पूर्व देखो संसार को जान करके **उसे वह जन्म के संस्कारों की आभा मानो बनी रहती है परन्तु देखो स्थूल स्मरण शक्ति उसमें लुप्त हो जाती है।** तो मेरे प्यारे! देखो माता के शरीर में प्रवेश हो जाता है। तो विचार आता रहता है ऋषि ने कहा हे ब्रह्मचारी! देखो आत्मा शरीर को त्याग करके वायु में भ्रमण करता है। पुनः माता के शरीर में प्रवेश करता है और यहीं आत्मा है जो मानो देखो सूक्ष्म-शरीर को जान करके उसमें मन, बुद्धि है, दस प्राण है और पन्च तन्मात्राए होती हैं परन्तु उनमें वह मंथन करता हुआ मेरे प्यारे कारण में प्रवेश हो जाता है। कारणा में ब्रह्मणां वृतम देखो यह वह एक मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करने लगता है और मोक्ष की

पगडण्डी को ग्रहण करके जब मन जब मानो देखो ज्ञान और प्रयत्न एक सूत्र में जहां आए वहां केवल देखो आत्मा केवल यह आत्मा रह जाता है परन्तु देखो वह अमृतम ब्रह्मा मोक्ष की पगडण्डी को, पगडण्डी पर गति करने लगता है और वह जो परमपिता-परमात्मा चैतन्य हैं जो संसार का रचियता है, निर्माण करने वाला, संहार करने वाला और मानो देखो उसका पालन करने वाला है उस परमात्मा की प्रतिभा को प्राप्त हो करके अपनी मोक्षाणाम बुह्मे क्रतम देवा मेरे प्यारे! वह अपनी आभा में परणित हो जाता है।

आज मैं देखो उस आत्मा की इतनी गम्भीर विवेचना नहीं। तो ऋषि कहता है, यमाचार्य हे बालक नचिकेता! तुमने यह जान लिया मानो देखो **आत्मा इस शरीर को त्याग करके कहां जाता है** अन्त मथे तो मथा मानो **देखो अन्त में शरीर को त्यागते समय जो विचार रहते हैं उन्हीं विचारो की एक मानो एक सूत्र बना करके उसी पर रमण करता है और वह देखो मन्तव्य करके और वह माता के शरीर में प्रवेश हो जाता है।**

देवलोक की आत्माएँ

मेरे प्यारे! देखो यह ऋषि ने वर्णन किया **कुछ आत्माएँ ऐसी हैं जो देवलोक को चली जाती हैं** मानो योगाभ्यासी हैं कुछ समय तक निर्द्वन्द हो करके योगी मानो देखो क्षेत्र में भ्रमण करती हैं। वह मुनिवरो देखो मोक्ष नहीं हुआ परन्तु कुछ आत्माओं को जीवन मुक्त कहते हैं। जीवन मुक्त उसे कहते है जो जीवन मानो देखो जीवन से वह मुक्त हैं, मरण से मुक्त हैं। मानो देखो जीवन से भी मुक्त हो जाते हैं परन्तु वह मध्यम योगम ब्रह्मे वेद की आख्यायिका कहती है जीवन मानो इसलिए जो शरीरों को स्वेच्छा से धारण करते हैं और स्वेच्छा से अपने शरीर को त्याग देते हैं। बेटा! जैसे मदालसा का जीवन मुझे स्मरण है जब मदालसा ने यह कहा था मैं संस्कार राजा से जब करा सकती हूँ जब मेरी इच्छा के अनुसार मानो मैं अपने क्रियाकलाप को करूं। राजा ने स्वीकार कर लिया। जब उनके तीन ब्रह्मचारी देखो ब्रह्मवेत्ता बन गये एक राजा बन गया तो उस समय उन्होंने यह प्रतिज्ञा की कि मैं अब बारह वर्ष के पश्चात् अपने शरीर को स्वेच्छा से त्यागूंगी। माता मदालसा ने जब बारह वर्ष का ब्रह्मचारी हो गया उस समय अपने राजा, पति को और एक सौ एक स्थली पर पुत्र को निहित करके उन्होंने कहा राजा अब मैं शरीर को त्याग रही हूँ। अब राजा ने कहा देवी मैं कहाँ जाऊंगा? उन्होंने कहा मैं नहीं जान पाती, मैं प्रतिज्ञा बद्ध हूँ, मेरी प्रतिज्ञा पूर्ण हो गई है। मैं, जितना मुझे कार्य करना था वह मैने किया है। मैंने तीन ब्रह्मचारियों को ब्रह्मवेत्ता बनाया एक राजा है। मेरे प्यारे! देखो माता ने एक वस्त्र दे करके ब्रह्मचारी के कण्ठ में स्थिर करके और उसने गायत्री मन्त्रों का जप किया और प्राण को अपान में, अपान को समान में, व्यान में प्रवेश करके शरीर को त्याग दिया। मेरे प्यारे! देखो वह देव-लोक को प्राप्त हो गई।

यौगिक प्रतीति व अद्भुत आत्माएँ

मुनिवरो! देखो वह अद्भुत आत्मा होती है वह एक क्षेत्र ऐसा है जहां **जिन आत्माओं का मोक्ष नहीं होता** परन्तु वह उन लोकों में, उन आत्माओं के क्षेत्र में वह भ्रमण करती हैं कुछ समय वहाँ रहती हैं परन्तु जब उनका भोग वितरित हो जाता है तो पुनः माता के शरीर में प्रवेश हो जाती हैं और वह उन पुण्यवानों के गृह में जन्म लेती हैं जहां पुनः मानो वह योग में परणित हो करके पूर्व के अभ्यास की मुनिवरों देखो वह आत्मा मानो योगाभ्यास में परणित हो जाती हैं। बेटा मैं गम्भीर क्षेत्रों में नहीं ले जा रहा हूँ। विचार-विनिमय केवल यह कि अभ्यस्त का विषय है यह परन्तु मैं तुम्हे परिचय करा रहा हूँ। कुछ आत्माएं मानो यौगिक होती हैं कुछ आत्मा मानो एक प्रतीति होती हैं और मेरे प्यारे! देखो कुछ ऐसी होती हैं जो अद्भुत हैं। मेरे प्यारे! देखो वह शरीरणाम ब्रह्मा लोकाम व्रतम देवा। मेरे प्यारे देखो **ऋषि ने कहा हे नचिकेता शरीर को त्याग करके आत्मा कहां जाता है, अपने-अपने लोक में प्रवेश करता है।**

मेरे प्यारे! देखो नचिकेता बड़े प्रसन्न हुए और नाचिकेता ने कहा

प्रभु। आपको धन्य है आपने मेरा अज्ञान दूरी किया। आपने मुझे मृत्यु से पार कराया है प्रभु! आप को धन्य है। आप वास्तव में यमाचार्य, यम हैं। यमाचार्य उसे कहते हैं जो यम मानो देखो मृत्यु को विजय कर लेता है। आपने वास्तव में मृत्यु को विजय किया है और **मृत्यु विजय वह करता है जो ज्ञानी और विवेकी होता है जो संस्कारों को उद्बुद्ध करने वाला होता है।**

अभ्यास से संस्कार उद्बुद्ध हो जाते हैं

मेरे प्यारे! देखो अंगिरस ऋषि गोत्र में श्वेतकेतु अंगिरस जिन्होंने बेटा! एक सौ पच्चीस वर्ष तक मुनिवरो देखो वह मौन हो गये थे और मौन हो करके अपने चित्त के संस्कारों को उद्बुद्ध करने लगे? तो बेटा देखो वह एक सौ पच्चीस वर्ष तक मुनिवरो देखो **दो लाख पच्चानवे हजार पांच सौ बावन जन्मों के संस्कारों को बेटा चित्तमण्डल में जान पाये थे ऋषिवर।** तो आज बेटा! देखो मैं उन वाक्यों में जाना नहीं चाहता हूँ क्योंकि ऋषि बड़े अभ्यासी और अपने में अन्वेषण करने वाले वह मौन रह करके और वायु के तत्त्वों से अपने उदर की पूर्ति करने वाले रहे हैं। बेटा देखो वह पत्र और पुष्पों को अमृतम जिससे मन की धाराओं का जन्म होता है जिनसे मानो आत्मा को आत्म-तत्त्व को जानने का अवसर प्राप्त होता है वह कौन आत्मा है जो बेटा वायु का सेवन करती हैं। मुझे स्मरण है एक सौ पच्चीस वर्ष तक जब अंगिरस ने तप किया तो बेटा! एक समय हम पूज्यपाद गुरुजनों के द्वारा उनके आश्रम में पहुँचे तो वह खेचरी मुद्रा से अपने में देखो वह उन पोषक तत्वों को ग्रहण करते जिससे उदर की पूर्ति हो जाती। मेरे प्यारे! देखो पोषक तत्व अपने प्राण के द्वारा प्राण को अपान में मिलाकर के देखो शीतली से वह जल को सिंचन करते रहते उसी से उदर की पूर्ति होना और अन्तःकरण में जो संस्कार विद्यमान थे उन्हीं को जानना बेटा! एक ऋषि का क्रियाकलाप है। बेटा! गाड़ीवान रेवक की विचारधारा भी ऐसी रही। **गाड़ीवान रेवक मुनि ने एक सौ पांच वर्ष तक गाड़ी के नीचे अपने जीवन को व्यतीत किया और वह इसी प्रकार का**

अभ्यस्त होते रहे। मेरे प्यारे! देखो खेचरी-मुद्रा से जल को लेना और देखो कुम्भक प्राणायम करने से मुनियों देखो वह वह पोषक तत्वों को लेना मेरे प्यारे! देखो **प्राण की प्रतिष्ठा को जान करके ही मुनिवरों देखो जन्म जन्मान्तरों के संस्कारो को जाना जाता है।** तो आज बेटा मैं इस क्षेत्र में तुम्हें विशेषता में नहीं ले जा रहा हूँ केवल यह क्या निस्सम ब्रह्मा क्रतम देवा-वेद का ऋषि कहता है हे मानव तू इतने गम्भीर क्षेत्र में चल जहां परमात्मा का राष्ट्र ही तुझे प्राप्त हो जहाँ परमात्मा की महिमा ही तुझे महिमावादी बन करके संसार-सागर से पार हो जाये।

तो बेटा! देखो नचिकेता देखो अपने में सन्तुष्ट हो गया और यमाचार्य के चरणों में ओत-प्रोत हो गया और यमाचार्य ने अपना सौभाग्य स्वीकार किया कि यह ब्रह्मचारी मेरे जीवन में पात्रता को प्राप्त हुआ क्योंकि विद्या का पात्र बना जाता है जिस विद्या का जो पात्र है वह विद्या उसी को प्रदान करनी चाहिए। नचिकेता ने उस विद्या का अभ्यस्त किया। बेटा! वह सागर से पार होने का ब्रह्मचारी अपने में ब्रह्मवर्चोसी बन गया।

तो विचार आता रहता है बेटा! मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नहीं आया हूँ मैं तो केवल तुम्हें परिचय देने के लिए आता हूँ व्याख्याता नहीं हूँ केवल परिचय देने के लिए आता हूँ। परिचय यह क्या मुनिवरो देखो **उस आत्मा को जानने का प्रयास करो हमारे अन्तःकरण में जो जन्म-जन्मान्तरों के संस्कार हैं उनको जानो और जान करके ही मुनिवरो देखो यह आध्यात्मिकवाद कहलाता है।** आध्यात्मिकवाद में पहुँचो जहाँ परमात्मा का राष्ट्र ही तुम्हें प्रतीत होगा। तो बेटा! आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ आज का वाक् अब यह सम्पन्न होने जा रहा है कल मुझे समय मिलेगा तो बेटा मैं शेष चर्चाए कल प्रकट करूंगा। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन।

दिनाँक : 27 जून, 1992
समय : रात्रि 8 बजे।
स्थान : श्रीमति शर्बती देवी,
ग्राम खुर्रमपुर, गाजियाबाद

॥ ओ३म् ॥

त्रेतकेतु ऋषि का याग

मेरे पुत्रो ! मुझे वह काल स्मरण आ गया। एक ऋषि का अनुसन्धान किया हुआ विचार मुझे स्मरण आ गया है। एक समय महर्षि भुन्जु हुए हैं, जिनके पिता त्रेतकेतु ऋषि हुए हैं, त्रेतकेतु ऋषि ब्रह्मवेत्ता भी थे। जहाँ ब्रह्मवेत्ता थे वहाँ विज्ञानवेत्ता भी थे। त्रेतकेतु एक समय अपने आसन पर विराजमान थे, एक वेद मन्त्र उसके स्मरण आ गया 'चित्रम् **सनझन घृष्म यस्वताः यथा चन्द्रही मृत लोकाः,**'' यह वेद का मन्त्र जब स्मरण आ गया तो इस पर अनुसन्धान करने लगा। भयँकर वन में शान्त मुद्रा में, नाना सामग्री एकत्रित है। विचारने लगे कि यह वेद मन्त्र क्या कहता है? त्रेतकेतु ऋषि ने उड़ान उड़नी प्रारम्भ की और उड़ान उड़ते हुए उनके द्वारा भौतिक यन्त्र भी विराजमान थे। वे भौतिक विज्ञानवेत्ता भी थे। हिमालय की कन्दराओं में उनकी एक अनुसन्धानशाला थी। उस अनुसन्धानशाला में विचार विनिमय करने लगे। उन्होंने चित्रों में उन चित्रावलियों को दृष्टिपात करने लगे तो वे याग करने लगे। परन्तु जब वेद का मन्त्र स्मरण आया तो वे विरह में रमण करने लगे। मानो जब याग कर रहे थे तो समिधा उनके समीप थी। उस समिधा को लेकर के जब उन्होंने उस अग्नि का (में) स्वाहा किया तो वह समिधा का साकल्य जब ऊर्ध्व गति को रमण करने लगा तो इसमें (उस समय) एक विवेकी ऋषि आए, ऋषि का नाम था सौवृतकेतु। सौवृतकेतु ऋषि महाराज यज्ञशाला में विराजमान हो गए। उनका अन्तरात्मा उस समय तो दुःखित था। मूल कारण था कि वे तपस्या कर रहे थे, तप करते-करते सिंहराज के प्यारे पुत्र से उन्हें मोह हो गया। और इतना अति मोह हो गया कि वे उसे अपने कंठ में स्नेह युक्त रहते। उस सिंहराज के पुत्र की मृत्यु हो गई। अब वह मृत्यु से दुःखित हो रहे थे। वे दुःखित हो करके शान्ति के क्षेत्र में जाना चाहते थे। ऋषि त्रेतकेतु जब याग कर रहे थे तो यज्ञशाला में विराजमान हो गए। जब विराजमान हो गए तो त्रेतकेतु ऋषि जहाँ याग कर रहे थे वहाँ अनुसन्धान भी कर रहे थे। अनुसन्धान करते हुए जब वैज्ञानिक चित्रों में वे जो स्वाहा उच्चारण करते थे, ऋषि भी मन्त्र उच्चारण कर रहे थे। तो वायु मण्डल में जो परमाणु और शब्द के साथ में चित्र गति कर रहा था, उस चित्र में कुछ विरह के कण उनके यन्त्रों में दृष्टिपात होते थे। याग समाप्त कर दिया। त्रेतकेतु ऋषि, ऋषि से बोले कि हे ऋषि ! तुम ऋषि हो या विरह में विराजमान हो। ऋषि कहता है कि महाराज ! यह आपने मेरे विषय में कैसे जान लिया। उन्होंने कहा कि जहाँ मैं याग कर रहा हूँ वहाँ अनुसन्धान भी कर रहा हूँ। वहाँ मैं अपने यन्त्रों में, चित्रावलियों में तुम्हारे शब्द के जो कण हैं, शब्द के साथ में जो चित्र अन्तरिक्ष में जा रहे हैं वह चित्र मेरे इस यन्त्र में गति कर रहे हैं, तुम्हारा चित्र आ रहा है, यह तुम्हारा विरह का चित्र है, व्याकुलता का चित्र है, मैं इसके मूल को जानना चाहता हूँ।

ऋषि बोले कि प्रभु ! वास्तव में मुझे विरह है। मुझे ममता ने मेरे हृदय को विदीर्ण कर दिया है। उन्होंने कहा कि ऐसा क्यों? मैं अपने मदरूपेन्द्र राजा के यहाँ पुत्र हूँ और मदकेतु राजा के यहाँ अपने माता पिता से आज्ञा पा करके मैंने तपस्या प्रारम्भ की। मैंने श्ररतम् प्रातक केतु महाराज को अपना पूजनीय स्वीकार करके तप करने गया। तप करते-करते मेरा तप नितान्त (पराकाष्ठा) में चला गया। मेरे तप की कोई सीमा न रही। परन्तु मुझे एक सिंहराज के पुत्र से मोह हो गया और कुछ काल पश्चात उससे मुझे विरह हो गया। क्योंकि वह मृत्यु को प्राप्त हो गया। मैं उसके विरह में हूँ। मेरे अन्तरात्मा में शान्ति नहीं आ रही है।

जब ऋषि ऐसा उच्चारण करने लगे तो भुञ्जु के पिता त्रेतकेतु ऋषि कहते हैं 'तुम्हें मेरी यज्ञशाला में विराजमान होने का क्या अधिकार था? क्योंकि मेरी यज्ञशाला में तो प्रसन्नचित्त हो करके विराजमान होना था। यह देवताओं का पूजन है, वह जब मैं देवताओं का पूजन कर रहा था देवताओं के चित्रों को चित्रण करता हुआ अपनी विज्ञानशाला में यन्त्रों को जान रहा था, तो तुमने मेरे से आज्ञा क्यों नहीं ली कि मैं तुम्हारी यज्ञशाला में विराजमान हो सकूँ? सोवृतकेतु ऋषि तू वेद का ऋषि है, वेद का मन्त्र स्मरण कर वेद का मन्त्र क्या कहता है ''मन्चाम् ब्रह्मे लोकाः देवन्तम् पूजानासी कृतो रुद्राः।'' वेद का ऋषि यह कहता है कि **यज्ञशाला के समीप वह प्राणी आना चाहिए, जिसका चित्त प्रसन्न हो** और जिसका चित्त प्रसन्न न हो, विरह में हो उस मानव को यज्ञशाला से दूर विराजमान हो करके वेद का मन्त्र स्मरण और याग की सुस्वाहों से उनके शब्दों का श्रवण करना। यह तो विमान है, यह ऋषि मुनियो का देव-पूजन करके देवता बनने का विमान है। वह यज्ञशाला के समीप वही यान आता है, जो देवता बनना चाहता है और देवता वह होता है, जो मृत्यु को विजय कर लेता है।

यजमान कौन होता है जो यज्ञ के समीप वहाँ विराजमान होने जा रहा है, जो मृत्यु के समीप नहीं है, जो जीवन के समीप होता है, जो प्रकाश के समीप होता है, अन्धकार उसके निकट नहीं है। जब ऋषि ने ऐसा कहा कि हे ऋषि ! तुम्हें कोई अधिकार नहीं था। परन्तु चलो कोई बात नहीं तू भी राजा भारतकेतु का पुत्र है। मुझे बहुत प्रसन्नता है, तुम्हारे हृदय को प्रभु शान्ति तो अवश्य देगा। जब ऋषि ने यह कहा कि ''तपस्यम् ब्रह्म लोकाः'', तप में मोह का क्या कार्य? मोह करना है तो अपने तप से करो, तप से भी मोह न करो, मन्त्र कहता है, ''तपम् मोह वृत्ति कृताः,'' एक वेद का मन्त्र कहता है ''तपम् मृत्यु अस्तो न पन्थद वृही वृताः'', इससे भी प्रीति न करो, तप से भी प्रीति न करो। तप करते ही जाओ। परन्तु तप से भी प्रीति न करो। जब वेद का ऋषि यह कहता है तो मानव मौन हो जाता है और विचारता है कि तपस्या क्या है? ''मानव व्रही वृताः'', जब ऋषि त्रेतकेतु ने इस प्रकार के वाक्य ऋषि को प्रकट कराए तो ऋषि का हृदय, जिसमें दबे हुए निचले स्थल में सँस्कार थे, वह मोह के कारण दमन हो गए थे। वह ज्ञान की अग्नि प्रदीप्त हो गई। वे जो तप के सँस्कार थे वे उद्बुद्ध हो गए और उद्बुद्ध हो करके ''ऋषि मौनाः ब्रह्मे वृता गृहे।'', हे भगवन् ! मेरे मोह का आवरण समाप्त हो गया है। मेरे मोह का कार्य समाप्त हो गया। मुझ में प्रकाश हो गया है।

ऋषि ने जब अपनी मधुरता से आत्मिक विज्ञान के स्वरूप को जान लिया कि जो यज्ञशाला में विराजमान होता है, वह मानो वाहन जाता है स्वाहा के साथ में, ब्राह्मण जब वेद का मन्त्र उच्चारण करता है और पांडित्य से गुंथा हुआ वेद मन्त्र है, तब वह अग्नि शब्दों का वाहन बन करके अन्तरिक्ष में गति करता है। शब्दों का वाहन वही अग्नि ही है। अग्नि उस शब्द को ले करके चित्र के साथ में द्यु लोक को चला जाता है। अथवा द्यु लोक को क्या कई लोकों में रमण करने वाला जहाँ मानव देवता बनता है। **देवता कौन बनता है? जो अपनी प्रवृत्तियों को ऊर्ध्व गति में ले जाता है, ऊर्ध्व गति में ले जाने वाला देवता कहलाया है।** तो मेरे पुत्रो ! देवता कौन है? जो ''देवतम् प्रमाण चेहः'' जो उन परमाणुओं के ऊपर शासन करता है जो परमाणु गति कर रहे हैं। जो परमाणु गति करके मानव को उद्बुद्ध कर रहे थे, इन्हीं परमाणुओं से ऊर्ध्व गति को वह मानव प्राप्त हो जाता है।

आज मैं विशेष चर्चा तो देने नहीं आया हूँ, केवल संक्षिप्त परिचय देने चला आया हूँ। ऋषि कहता है, आओ ऋषिवर ! तुम मेरी चित्रावलियों को दृष्टिपात करो। जब उसकी अग्नि उद्बुद्ध हो गई तो यज्ञ पुनः प्रारम्भ हो गया। तो मेरे पुत्रों ! **यजमान और जितने भी होताजन होते हैं, उनके द्वारा प्रसन्नता हो, प्रसन्नता से जो देव पूजा करते हैं वे मृत्यु से दूर होने का प्रयास**

करते हैं। क्योंकि याग का सम्बनध अन्तरिक्ष से होता है और अन्तरिक्ष का सम्बन्ध सूर्य से तथा द्यु लोक से होता है और द्यु सूर्य तथा द्यु लोक का सम्बन्ध महत्तत्त्व से होता है और महत्तत्त्व का सम्बन्ध प्राणतत्व से होता है और प्राणतत्व वरणीय कहलाता है। इसीलिए उसी को चैतन्य देव कहा जाता है। सर्वत्र ब्रह्माण्ड का सम्बन्ध प्रभु से है और प्रभु के राष्ट्र में रात्रि नहीं होती। **जब प्रभु के राष्ट्र में रात्रि नहीं होती तो वहाँ अन्धकार भी नहीं होता।** जब अन्धकार नहीं होता तो वहाँ मृत्यु भी नहीं होती और जहाँ मृत्यु नहीं होती तो मृत्युञ्जय पुरुष होता है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री विवेक त्यागी, अल्कापुरी, हापुड़	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री वी.पी. सिंह, वसुंधरा, गाजियाबाद	250 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्रीमती शशि गुप्ता, नोएडा	125 रुपये
डॉ. ओ.पी. आर्य, आगरा	125 रुपये
श्री गुलजार सिंह, जगत पुरी, कृष्णा नगर, दिल्ली	100 रुपये
श्रीमती वीना त्यागी, अलीगढ़।	100 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मास्टर कवन्धी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	101 रुपये

॥ ओ३म् ॥

जीवन को प्रकाश में ले जाएँ

मैं इन विचारों को गम्भीर बनाने नहीं जा रहा हूँ। त्रेतकेतु ऋषि अपने आश्रम में यह विचार कर रहा है, अनुसन्धान कर रहा है, इस विद्या का स्मरण करा रहा है। ऋषि को तो पुनः ज्ञान हो गया और यह कहा कि भगवन् ! मेरा वास्तव में जो ममतामय मोह था वह एक सिंह के पुत्र से व्यर्थ हो गया। तो उसको ज्ञान की प्रतिभा आने लगी। ज्ञान के अँकुर उत्पन्न हो गए, तो ऋषि पुनः तप में, उसी महान् प्रतिभा में रमण करने लगा। विचार विनिमय क्या? वेद का ऋषि यह कहता है कि सँसार में मृत्यु का अभाव है, वेद का मन्त्र बारम्बार हमें यह घोषणा कर रहा है और यह घोष दे रहा है तो मैं उच्चारण कर रहा था कि पुत्रो ! जहाँ जिस स्थान में याग होते हैं वह विमान है और विमान में विराजमान हो करके महापुरुष द्यु लोक को गमन करते हैं। जब वह द्यु लोक को गमन करते हैं तो द्यु लोक को हमें विचारना है, हम अपने जीवन में एक महान् और प्रतिभा को अपनाने के लिए सँसार में आए हैं और उस प्रतिभा को अपनाना हमारा कर्त्तव्य कहलाया गया है।

आओ मेरे पुत्रो ! आज का हमारा वेद का आचार्य वेद की हमें सूक्ष्म सी चर्चाएँ, एक आदेश कर रहा था, हमें विज्ञान के युग में, ज्ञान के युग में और मानवता के युग में रमण करना चाहिए। क्योंकि मानवता समाज का पूरक कहलाया जाता है। हमें याग करना है, मृत्यु से हमें पार होना है, मृत्यु के अभाव में हम अपने जीवन को दूर ले जाएँ। प्रकाश में ले जाएँ। योग में ले जाएँ। क्योंकि **'दोगस्त प्रभे'** प्रकाश में रमण करते हुए इस सँसार सागर से पार हो जाएँ।

पूज्यपाद-गुरुदेव

॥ ओ३म् ॥

प्रसन्नता का मार्ग

यह है आज का वाक्य। आज का वाक्य क्या कह रहा था? महात्मा भुञ्जु के पिता त्रेतकेतु ने अपने विज्ञान शाला में विराजमान हो करके जहाँ वह नाना प्रकार की चित्रावलियों का दिग्दर्शन करते थे, शब्द के साथ में प्राण के श्वांस के साथ में चित्तवृत्तियों का भी दर्शन कराते थे आयुर्वेद के महान् प्रकाण्ड पण्डित थे। आयुर्वेद में भी उनकी विचित्र गति रहती थी। वह नाना प्रकार की विद्याओं में रमण करने वाले ऋषि थे। **हमें उन ऋषियों के आदेशों को उनकी विचारधारा को ले करके अपने जीवन को व्यतीत करना चाहिए। इसलिए आज का वेद का ऋषि कहता है कि हे मानव ! तू अपने जीवन में प्रसन्नता को लाने का प्रयास कर और प्रसन्नता क्या है? प्रसन्नता उसे कहते हैं जो ज्ञान से युक्त होती है। ज्ञान और विवेक से जो युक्त होने वाली प्रतिभा है उसी का नाम प्रसन्नता है।** वह प्रसन्नचित्त होने वाला प्राणी सदैव ऊर्ध्व में रहने वाला रहता है। वह सदैव देवताओं के लोक में रमण करता है। देवताओं में प्रसन्न रहता है। परमपिता की आराधना करते हुए और मृत्युञ्जय बनते हुए परमात्मा के क्षेत्र में हम गमन करते चले जाएँ। प्रत्येक आभा में रमण करना हमारा कर्त्तव्य है। यह है बेटा ! आज का वाक्य। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि प्रत्येक वेद मन्त्र, प्रत्येक मानवीय क्षेत्र में हम अपने जीवन, अपनी आभा, अपनी मानवता का सदैव प्रसार करते हुए, अपनी इन्द्रियों पर संयम करते हुए ज्ञान और विवेक के द्वारा हम योग के क्षेत्र में पहुँचे। हम विज्ञान के क्षेत्र में पहुँचे। मृत्यु पर विजय पाने का प्रयास करें। मृत्यु हमारे समीप न आ जाए। यह है आज का वाक्य। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि **जब हम यज्ञशाला में विराजमान हों, याग के समीप विराजमान हो तो हमारा चित्त प्रसन्नता को प्राप्त होना चाहिए। हमारा चित्त प्रसन्न रहे, हमारे चित्त में एक आनन्द हो।** क्योंकि वह मानव के जीवन का एक विमान बन करके अन्तरिक्ष में ओत-प्रोत होता है। यह प्रत्येक मानव जानता है कि हमारा जो शब्द है वह अग्नि का वाहन बना करके अन्तरिक्ष में ओत-प्रोत हो जाता है। अन्तरिक्ष में यह शब्द नष्ट नहीं होता, यह शब्द सदैव बना रहता है और जिसका यह शब्द होता है इन्हीं असली रूपों में, परमाणु रूप में उस मानव को प्राप्त होता है, जिस मानव का जो शब्द है, जिस मानव की वह प्रतिभा अथवा शरीर है। क्योंकि उसका चित्र अन्तरिक्ष में गति कर रहा है तो इसीलिए वेद का ऋषि यह कहता है, त्रेतकेतु ऋषि ने यही तो वर्णन कराया है ऋषि से कि तुम्हारा जो चित्त अप्रसन्न हो रहा है, इसमें रजोगुणी और तमोगुणी मृत्यु के कण अन्तरिक्ष में जा रहे हैं ये तुम्हें मृत्यु के लिए बारम्बार रुलाने वाले बनेंगे। इसलिए बारम्बार जो रुदन है यह तुम्हारे जीवन को निराशा में परणित करते रहेंगे। आशा समाप्त हो जाएगी। निराशा मानव की मृत्यु का मूल कारण बन जाती है। इसलिए इसका नाम अज्ञान है। वेद का ऋषि ऊँचे-ऊँचे तत्वों की मिमांसा करता हुआ विज्ञान के युग में चर्चाएँ, दर्शनों की चर्चाएँ करता हुआ कहता है कि वह जो तुम्हारा विघ्न है वह तुम्हारे लिए प्रियतप नहीं है। इसलिए इससे तुम्हें उपराम होना है और यज्ञशाला में जो अग्नि का वाहन बनता है, स्वाहा कहते ही प्रत्येक साकल्य के साथ तो वह तुम्हारा चित्र बन करके, तुम्हारा स्वाहा के साथ में जिस दिशा में है, जिस धारा में हों, जिस प्रसन्नता में हों उसी प्रकार का चित्र तुम्हारा अन्तरिक्ष में चला जाता है। महर्षि भारद्वाज ने यज्ञशाला में भगवान् राम को भी यह निर्णय कराया रहा था। यह यंत्रों से दृष्टिपात कराया था। स्वेतकेतु इस विद्या को जानते थे तो इसलिए यह जो विद्या है इसको जानने का प्रयास करो।

स्वर्ग कैसे आता है? स्वर्ग आता है महत्ता से और वही चित्र प्रतिभा के तुम्हारे गृह में रमण करते हैं और उन्हीं शब्दों से तुम्हारे गृह में स्वर्ग आता है। वह तुम्हारे अन्तःकरण को दिव्य बनाता है। कोई

भी मानव गृह में स्वर्ग लाना चाहता है तो वह सत्यवादी बने, विवेकी शब्दों का प्रतिपादन करे। ज्ञान और विज्ञानमय यज्ञ आदि होने चाहिएँ। जिससे तुम्हारा यागमय जीवन हो करके तुम्हारी मानवता पवित्र बन करके मानवता वाला ही कार्य करे। मानवता किसे कहते हैं? यह मैंने तुम्हें कई काल में उच्चारण करते हुए कहा था कि यह मानवता क्या है? **मानवता उसी को कहते हैं जहाँ विज्ञान हो, ज्ञान हो और विवेक हो इन तीनों का मिश्रित होने का नाम मानवता कहलाती है।** यह राष्ट्र के लिए, समाज के लिए धर्म और मानवता ऊर्ध्व गति में रमण करती है। तो यह है आज का वाक्य। अब मुझे समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएँ कल प्रकट करूँगा। अब वेद का पाठ होगा।

ओ३म् देवाः आभ्यां मनु रथं वाचन्नमः।

ओ३म् ग्राहणाऽहम्।

पूज्यपाद-गुरुदेव

दिनाँक : 20 मई, 1976

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेद मन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''संहिता'' रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से प्रस्तुत है :-

पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली

बैंक खाता नं. - 0149000100229389, IFS Code – PUNB–0014900

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.) नई दिल्ली

॥ ओ३म् ॥

स्वर्ग की विवेचना

आओ मेरे प्यारे ! विचार विनिमय क्या? एक मानव उड़ान उड़ता हुआ कहाँ चला जाता है? एक मानव इस पृथ्वी मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ मंगल और चन्द्रमा की यात्रा में चला जाता है परन्तु उसे आनन्द की अनुभूति नहीं हो पाती। आनन्द उसको प्राप्त नहीं होता। **मेरे प्यारे ! उसे आनन्द किस काल में प्राप्त होता है? यह जानना है मानव को।** मैंने ये नाना प्रकार की टिप्पणियाँ दी हैं। अब मानव उस सँसार में स्वर्ग चाहता है अपने लिए। परन्तु वह स्वर्ग कैसे बन सकता है? इसके सम्बन्ध में महर्षियों ने अपनी ऊँची लेखनियों से लिखा है। **महर्षियों ने यह कहा है, हे मानव ! यदि तूने स्वर्ग लाना है तो वह जो तेरी आध्यात्मिक उड़ान है उसको उड़ना प्रारम्भ कर।** मेरे प्यारे ! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जब महाराजा अश्वपति के यहाँ नाना वैज्ञानिक विराजमान रहते थे, मन्त्री, उपमन्त्री इत्यादि सर्वत्र स्वर्ग की इच्छा के लिए कामना करते। जब आश्रम में प्रवेश करते तो बेटा मुझे वह काल आज भली-भाँति स्मरण आता चला जा रहा है। उनकी कितनी ऊँची उड़ान रहती इस सम्बन्ध में, कि परमात्मा को, उस परमानन्द को प्राप्त करना चाहते हैं जिससे हमारा अन्तःकरण मुनिवरो ! विचित्र बनता चला जाए। **मेरे प्यारे ऋषि मुनियों ने एक ही वाक्य कहा है। ''हे मानव ! तू आध्यात्मिक उड़ान को उड़ना प्रारम्भ कर। तू आत्मा के क्षेत्र में चल। आत्मा जिसे आज्ञा दे उसी कार्य को तुझे करना है और उसी को करते हुए तुझे आत्मा की शान्ति को प्राप्त करना है।''**

मेरे प्यारे ! मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे कल इससे पूर्व शब्दों में यह वर्णन करते हुए कहा था कि आधुनिक काल में गृह

का पालन अच्छी प्रकार नहीं होता। मैंने अपने पुत्र से कहा था कि वास्तव में ऐसा ही है। सर्वत्र देखो, वायुमण्डल में जो वायु उत्पन्न होती है, वह पृथ्वी मण्डल पर आती है। जब पृथ्वी मण्डल के परमाणुओं को लेकर के वेग से रमण करती है तो उस वायु में से प्राणवान विचारों को लेकर के वह प्रभावित हो जाता है। मेरे प्यारे ! वह जो मानव प्रभावित हो जाता है उससे उसके विनाश की मानो एक प्रतिभा उत्पन्न हो गई है। तो आओ, मेरे प्यारे ! विचार विनिमय क्या? कि हमारे यहाँ **ऊँची उड़ान** होनी चाहिए। वह कैसी उड़ान हो? लोक-लोकान्तरों की उड़ान नहीं, नाना प्रकार के परमाणुवाद की उड़ान नहीं, मानो अन्तरिक्ष में यानों को निर्माण करने की कोई प्रतिभा नहीं परन्तु **विचार विनिमय केवल यह करना है कि आज हम अपने जीवन में एक आभा को लाना चाहते हैं, एक मानवता को लाना चाहते हैं।**

परन्तु वह मानवता कैसे प्राप्त होती है? मैंने बहुत पुरातन काल में मानवता की व्याख्याएँ की थी। मानवता की व्याख्या करते हुए यह कहा था कि सँसार में प्रत्येक मानव अपने आनन्द को पाना चाहता है। **मानव को सुख उस काल में प्राप्त होता है जब बेटा ! वह शान्ति में विराजमान होता हुआ मुनिवरो ! जो उस क्षेत्र में रमण करता हो जहाँ उसे आनन्द की उत्पत्ति और सुगन्ध उत्पन्न होती है।** सँसार में प्रत्येक मानव सुगन्ध को चाहता है। दुर्गन्ध की इच्छा प्रकट नहीं हो पाती। मेरे प्यारे ! विचारना क्या है? आज हमें यह विचारना है कि हम दोनों प्रकार की आभाओं को लेकर के रमण करना चाहते हैं। एक भौतिक जगत की उड़ान है। लोक-लोकान्तरों की उड़ान क्या? और भी ऊर्ध्वगति की उड़ान है। परन्तु इससे पूर्व एक उड़ान मानव की आध्यात्मिक उड़ान है। मानव आध्यात्मिक क्षेत्र को ऊँचा बना। तेरा जो आध्यात्मिक क्षेत्र है वह न होने के तुल्य है।

आओ मेरे प्यारे ! आज हम आत्मा की प्रतिभा को और उस आत्मा के क्षेत्र में जाना चाहते हैं, जहाँ मानव के समीप एक नवीन आभा बन जाती है। उस आभा को ले करके जब मानव अग्रणी बनता है, वह मानव सबल होता है। और मुनिवरो ! इससे मानव को किसी प्रकार की विपरीत गति हो गई तो मेरे प्यारे ! वह मानवीय समाज में एक हानिप्रद हो जाता है। मैं अभी-अभी तुम्हें यह वाक्य प्रकट करा रहा था कि मानव की उड़ान आनन्दयुक्त होनी चाहिए। मानव की उड़ान में एक विचित्रवाद होना चाहिए। मेरे प्यारे ! एक मानव उड़ान उड़ रहा है, स्वर्ग में जाने के लिए परन्तु योग में जाता हुआ वह अपने मन और प्राण को सार्थक रूप में लाना चाहता है। मैंने बहुत पुरातन काल में यौगिक आचार्यों के सम्बन्ध में बहुत ऊँची उड़ान उड़ी। परन्तु देखो पुरातन काल मुझे स्मरण आता रहता है। जहाँ बेटा ! योगियों के मध्य में विराजमान होकर के योगिक चर्चाएँ कीं और योगियों के उस क्षेत्र में जाने का प्रयास किया।

पूज्यपाद-गुरुदेव

सूचना

सभी सदस्यों को यौगिक प्रवचन मासिक पत्रिका भेजी जा रही है। पत्रिका प्रत्येक मास की 10/11 तारीख को प्रेषित की जाती है। किसी आजीवन/वार्षिक सदस्य को पत्रिका प्राप्त न होने की स्थिति में हमें एक सप्ताह के बाद लिखें। सूचना मिलने पर पत्रिका पुनः प्रेषित की जायेगी।

डॉ. मधुसूदन, ए-59, पंचशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017
दूरभाष : (0)11-26498737

श्रृङ्गीऋषि वेबसाईट

Website : www.shringirishi.in
Email : www.contact@shringirishi.in

॥ ओ३म् ॥

Spiritual Lights

My dear Rishivars (sages) ! let me put it again in my own words. What is the fundamental cause of that inquisitiveness which is expressive of the man's heart? Our tiny brain, which is the repository of what is called as the 'Brahmrandra' in the upper cavity in the skull has nerve pleuxes. It has various types of conducting nerves which have their bearings on the mind. The various vibrations of the mind are related to the various nerves. Some nerve is related to the Dhruv sphere, Some other is related to the Jethaye Star! another one is related to Mars! still another is related to the Moon. Similarly there are others which are related to the Sun, the Aruni sphere, Arundti sphere, Rohini star, the Manketu star, the Vashishtha MandaI, the Krika Mandai and so on. Those vibrations of the mind, which are in the sprouted-seed-form are nothing but the inquisitiveness of the mind. Because from mind only these vibrations actuate the nerves. The mind belongs to the world of matter. (the Prakriti), Nature. Therefore this entire planetarium of Nature, with all the worlds, constituting it, has relation with the mind through the nerves.

There are 84 types of waves which have been accepted by us originating from the mind. Accordingly these 84 types of waves are connected with the Brahmrandra. Again from each nerve there are about 72 types of waves which have their bearings with the various worlds and with the various Suns. When these waves of the mind with their vibrations, begin resurrecting the subtle body, at that time the Yogi, or the elevated being with the subtle body, starts realizing the vastness of this phenomenon-world. He experiences the capacity to pervade the various worlds.

My beloved seers ! I would not like to dive deeper into the subject. The undulations of the mind begin to translate themselves into the expressions of the intellect.

Twenty-one types of Tanmatras (subtlenesses) begin to spring from the intellect. They have their bearings with the worlds of this vast universe, nay with the entire cosmos. Just as, when ghee is poured or offered into the fire, the fire is set ablaze, similarly these radiatoins from the intellect viz. Shvetketu, Rinika, Adhyat, Prachi, Astam etc. are induced into the cosmic world and produce beautiful, glorious waves.

What is the 'ghee', the essence which pervades the cosmic world ? Look sages, ! What is called as Prana in our concepts has been considered as the pervading essence of the cosmic creation. 'This Prana' brings intellect into operation and when Prana & intellect come in contact with each other in cosmic, at that time the Yogi gets, into a state of static equilibrium and he acquires complete control over consciousness. The combination of knowledge and organs of action, through intellect, comes in contact with the mind stuff (chita) the strength of senses (lndriyas) bearing potent, each of these gives rise to the radiations and these radiations gaining strength come in contact with" Dev Loka". Then the Yogi aquired knowldge of the working of the physical, subtle and causal bodies. Oh sages ! Maharishi Bhardwaj, while analysing words uttered by the mouth called Vayashti (pertaining to individual) said that the words thus uttered when pass from an individual to the cosmos, they give rise to thousands of radiations. Just as we communicate our thoughts to the cosmos through instruments. (the Radio) similarly a Yogi exerts his influence on others at a distance by concertrating his thoughts. Rishi Bharadwaj advises to control our thoughtwaves, because these very thoughtwaves are part of Yoga. When these thoughts are dominated by 'Satwaguna' (purity), the word uttered by the mouth goes round the world 284 times in a moment and when it is dominated by 'Rajoguna' (activity based on desires), it revolves round the earth 384 times in a moment and when dominated by 'Tamoguna' (inertia), it goes round the earth 484 times in a moment. The Rishi advises not to utter impure words because if these impure words come into contact with the mind stuff (Anta Karna) of a saint his intellect will become polluted. Thus the impure words not only exert their impact on saints and Yogis, but also influence men at large. This will result in the loss of confidence in him leading to his worldly death. You will know your physical body only when you will acquire knowledge of yogic secrets.

Oh sages! it is necessary to acquire knowledge of the physical body before getting knowledge of the subtle body. Our Heart has two fold functions, one is connected with the 'Chita' and the other with the mind. There is a difference in the two functions. On this basis, Nature has three aspects; 'Satoguna', 'Rajoguna' and 'Tamoguna'. Mind is a product of Nature. Nature's three characteristics will be reflected in tte mind's working. Thus there appears a difference between Heart's vibrations and mind's vibrations. What ever "Chaitna" emerges from the senses through the mind, has many forms i.e. our organs of touch, organs of hearing, organs of seeing and organs of smelling, Rishi Bharadwaj says, that millions of atoms pass into the stmosphere from 'Prana' which originate from the Navel. A scientist invents an instrument from these atoms. What is this instrument? It is the image of that man who has breathed out those atoms.

Oh sages ! when in this way each atom is fully researched-how many atoms each of earth, water, fire, air and atmosphere (Antraksh) escape through the nose and when a Yogi manages to control these atoms, he acquires such power (Yogic energy) as to count these atoms. Rishi Bhardwaja says that millions of atoms of earth, water, fire, air and outer space, (Antraksh) escape from the nose. The Yogi, through his yogic powers, combines these atoms and through these (atoms) on acquiring subtle body, can acquire physical body without taking birth. This is only possible when a Yogi acquires complete control over the atoms.

Oh sages ! In the same way radiations of many kinds emerge from our eyes. The chief of these impress our 'Chita' and this 'Chita' is closely related to our Atmana. (soul) With the help of these radiations we acquire knowledge of the world as well as of Yogic powers, by which a Yogi can roam in the universe. These very radiations enable us to differentiate between a wife, sister & Guru. And when these are under the influence of 'Tamoguna' (Inertia), they create evil effects. Oh sages ! the radiations that escape from different organs are also different in number. Twenty four types of radiations emanate from the eyes. When a Yogi concentrates his mind on these radiations, he acquires knowledge of all the worlds. This knowledge acquired by the Yogi is as vast as the vast universe. The Rishis have probed into this knowledge. They have gone deep into this matter in the past and they shall continue to do so in future also. Once Swang Ketu asked Rishi Bhardwaja whether the knowledge of the different organs as related by him was all and no more? The Rishi replied that whatever he had related was according to' his ability. The coming Rishis can throw more light on this subject. Oh Son! the Rishi's heart is magnanimous and is free from pride. They completely surrender themselves to God and acquire knowledge of the world. O Sages ! man cherishes a desire to acquire knowledge all the time and as soon as his desire is fulfilled, he cherishes it no longer. Just as a mother feeds her child when the latter is restless. The child has a desire to suck milk and as soon as his desire for milk is satisfied the mother separates him from her breasts. This very desire to know a thing is called 'Ghrit' (Ghee) of 'Oev Loka'. Continue to make an offering of your thoughts to this 'Ghrit' and thus your thoughts will spread far and wide and give you vast knowledge which will be unlimited. Oh Sages ! Rishi Bhardwaja has said that just as from our organs of touch, many vibrations arise, similarly from our organs of hearing (ears) whose hearing apparatus is known by many names, i.e. "Surya-nit-nam Shabdawli Yantar" 'Shodani' 'Rain Ketu', 'Man Ketu' etc. etc., this can tolerate billions and billions of vibrations and when this limit is exceeded, man refuses to tolerate them (words) because our hearing appratus is too weak to hear it. O Sages! this proves that our God-made appratus with the aid of Nature, has its limitations. From the words related to ‘Satoguna’ many other words spring up, some of them are connected with the senses (Indriyas) and through the ‘Indriyas’, it is linked up with the mind and from mind it is connected with intellect (Budhi) and ‘Budhi’ gets linked with ‘Chita’ and from ‘Chita’ it reaches ‘Brahamrandra’ and from Brahamandra it gets connected with the organs of hearing. ‘Brahamrandra’ is closely connected with ‘Dev Loka’. Thus this organ of hearing, gets in touch with ‘Dev-Loka’ Deu Loka is replete with words of millions of years which are indestructible. The Yogi through his yogic powers gets in contact with these words through mind & ‘Prana’ and thus acquires complete knowledge of the past and present, both of physical and subtle worlds. Just as Nature operates through the instrumentability of God, similarly this human body, through the instrumentability of Atman, operates and acquires all knowledge with the help of diferent organs.

Oh Sages! I remember the store of knowledge given by Rishi Bhardwaj, who was equally well versed in material as well as Spiritual science. By dint of material science he combined atoms & protons to manufacture instruments and with their help he was able to visit Mars, Venus, Moon etc. and through his yogic powers he was successful in acquiring Atmana (soul) and Parmatmana (God) Knowledge.

Oh Sages ! man through God’s Contemplation concentrating on Mind & Prana, abondoning all pride, aquired yogic power and through this he acquired knowledge of this wonderful world.

Pujyapad Gurudev

Yogic Wisdom of the Ancient Rishies.

Parvachan Dated 12th April, 1971

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	80.00
2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	50.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	50.00
4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	50.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	50.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	50.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	30.00
10.	शंका-निवारण	30.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
13.	देवपूजा	20.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	110.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	110.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	100.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	40.00
19.	महाभारत के रहस्य	25.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	50.00
22.	महाराजा-रघु का याग	25.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	35.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	30.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	25.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	30.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	30.00
29.	याग-मन्जूषा	25.00
30.	आत्म-दर्शन	30.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	25.00
32.	याग और तपस्या	45.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	25.00
35.	याग-चयन	25.00
36.	दिव्य-रामकथा	110.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	25.00
38.	दिव्य-ज्ञान	35.00
39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	80.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	25.00
41.	आत्म-उत्थान	30.00
42.	तप का महत्व	30.00
43.	अध्यात्मवाद	25.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	35.00
45.	वैदिक-प्रभा	30.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	35.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	30.00
50.	आत्मा का भोजन	35.00
51.	साधना	30.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	60.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	40.00
56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	60.00
57.	माता मदालसा	40.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	60.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	65.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	70.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
	पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम्, कर्म भूमि लाक्षागृह	10.00

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्बोधन

हे मानव ! आज तुझे भी उदार बनना है और कैसा उदार बनना है कि सँसार में कोई मान करे या न करे परन्तु तू अपनी उदारता को न त्याग। यदि कोई तेरा अपमान कर रहा है और तू अपनी उदारता को त्यागता है तो मानो तेरी मानवता शांत हो जायेगी। तुझे अपनी उदारता की रक्षा करनी है। यह लोकेष्णा ऐसी है कि मान अपमान में आ करके तेरी उदारता को सूक्ष्म बना सकती है। आज तुझे इन तरंगों से पार होना है। समुद्र में आयी हुईं इन तरंगों में आ गया तो तू डूब जायेगा और ऐसे समाप्त हो जायेगा, जैसे जल के न रहने पर मीन शांत हो जाती है। हे मानव ! तू अपनी उदारता को न त्याग।

पूज्यपाद-गुरुदेव

वर्ष 42 : अंक : 502
जुलाई 2014

मूल्यः
दस रुपये

प्रकाशक, मुद्रक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश (प्रकाशन मंत्री वै.अ.स.) द्वारा वैदिक
अनुसंधान समिति पंजी०
के लिए नवप्रभात प्रिंटिंग प्रैस, दिल्ली से छपवाकर सी-38,
शिवालिक मालवीय नगर, नई दिल्ली-17 से प्रकाशित।
(अवै०) सम्पादक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश, दूरभाष : 26498737

POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-07-2014
Published on 5th day of the same month